ओ३म्

पाक्षिक
परोपकारी

परोपकारिणी

ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद

वर्ष - ५८ अंक - ६ महर्षि दयानन्द की स्थानापन्न परोपकारिणी सभा का मुखपत्र मार्च (द्वितीय) २०१६

महर्षि दयानन्द सरस्वती

श्री रघुनाथ पाण्डेय जी की खतौनी का चित्र

ग्राम क्रमांक : 57050100009 ग्राम का नाम : मेहनगर परगना : बेला दौलताबाद तहसील : मेहनगर
जनपद : आजमगढ फसली वर्ष : 1420-1425 भाग : 1

खाता खतौनी क्रम संख्या	खातेदार का नाम	पिता/पति-संरक्षक का नाम	निवास स्थान	भौमिक अधिकार प्रारम्भ होने का फसली वर्ष	खाते के प्रत्येक गाटे की खसरा संख्या	प्रत्येक-गाटे का क्षेत्रफल (हे.)	खातेदार द्वारा देय मालगुजारी या लगान	परिवर्तन सम्बन्धी आज्ञा या उसका सारांश उसकी संख्या तथा दिनांक सहित और आज्ञा देने वाले अधिकारी का पद	टिप्पणी
1	....	2	....	3	4	5	6	7-12	13
श्रेणी :	1-क भूमि	जो संक्रमणीय भूमिधरों के अधिकार में हो।							
00505	मेवालाल	महेश	स्था.	1392 फ.	776	0.0110			
	संजय	हीरालाल	नि. ग्राम	1392 फ.	1567	0.0140			
	रोहित	हीरालाल	नि. ग्राम						
	राजीव	हीरालाल	नि. ग्राम						
	अश्विनी कुमार	हीरालाल	नि. ग्राम						
	मु. दुर्गावती	हीरालाल	नि. ग्राम						
	पन्नालाल	महेश	स्था.						
	सभाजीत	महेश	स्था.						
	मिश्री	रघुनाथ	स्था.						
	अवधेश	गिरिजाशंकर	स्था.						
	अशोक	गिरिजाशंकर	स्था.						
				कुल गाटे :	2 कुल क्षे :	0.0250	1.00		

हस्ताक्षर

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः,
सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।
संसारदुःखदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकाराः।।

ओ३म्

RNI. No. ३९५९/५९

परोपकारी

मार्च द्वितीय २०१६

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ५८ **अंक** : ६
दयानन्दाब्द: १९२
विक्रम संवत्: फाल्गुन शुक्ल, २०७२
कलि संवत्: ५११६
सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११६

सम्पादक
प्रो. धर्मवीर

प्रकाशक–परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर– ३०५००१
दूरभाष: ०१४५–२४६०१६४

मुद्रक–श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५–२४६०८३१

–परोपकारी का शुल्क–

भारत में

वार्षिक–२०० रु., **द्विवार्षिक**–३९० रु., **त्रिवार्षिक**–५८० रु., **आजीवन**–(=१५ वर्ष)–२००० रु.।

विदेश में

वार्षिक–५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस. डालर, **द्विवार्षिक**–९५ पा./१५२ डा., **त्रिवार्षिक**–१४० पा./२२५ डा., **आजीवन**–(=१५ वर्ष)–५०० पा./८०० डा.।

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५–२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५–२६२१२७०

अनुक्रम

१. वैदिक साहित्य और संस्कृति पर....	सम्पादकीय	०४
२. योग रहस्य	स्वामी वेदानन्द	१४
३. धर्मसारथी श्री कृष्ण	विवेकानन्द सरस्वती	१६
४. आर्य-द्रविड़-वैमनस्य और वैदिक...	डॉ. फतह सिंह	१९
५. वैदिक पुस्तकालय के नये संस्करण		२३
६. महर्षि दयानन्द के शिक्षा सम्बन्धी...	श्री पं. प्रियव्रत	२४
७. कुछ तड़प-कुछ झड़प	राजेन्द्र जिज्ञासु	२९
८. जिज्ञासा समाधान-१०७	आचार्य सोमदेव	३३
९. स्तुता मया वरदा वेदमाता-३०		३५
१०. संस्था-समाचार		३६
११. पुस्तक परिचय	देवमुनि	३९
१२. विश्व में प्रथम बार वेद ऑन लाईन	आचार्य सोमदेव	४०
१३. आर्यजगत् के समाचार		४१

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

– उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएं –
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

सम्पादकीय

वैदिक साहित्य और संस्कृति पर मैकाले और मैक्समूलर से भी घातक आक्रमण

आज के इस सन्दर्भ में आर्य समाज को एक दुर्भाग्यशाली संस्था कहा जायेगा, जिसके संस्थापक ने इसको आज विश्व में निर्णायक भूमिका निभाने का सामर्थ्य दिया था। आज वह घटनाक्रम में पटल से भी ओझल है। अंग्रेजों ने मैक्समूलर के माध्यम से इस देश की भाषा संस्कृत और संस्कृति का भरपूर नाश किया। बहुत अंशों में इस प्रयास को सफल कहा जायेगा, परन्तु ऋषि दयानन्द ने उसकी योग्यता पर टिप्पणी करते हुए कहा था- **यस्मिन् देशे द्रुमो नास्ति तत्रैरण्डोऽपि द्रुमायते।** जिस देश में पेड़ नहीं होते, वहाँ लोग एरण्ड को ही पेड़ समझते हैं। ऋषि ने मैक्समूलर की सभी वेद-विरोधी धारणाओं का खण्डन करते हुए, उनकी विद्वत्ता पर ही प्रश्न चिह्न लगा दिया था। श्याम जी कृष्ण वर्मा के माध्यम से उन्होंने कहलवाया था- मैक्समूलर जैसे विद्वान् भारत की गली-गली में मिल जाते हैं। ऋषि के समय तक यह सच भी था, परन्तु आज मैकाले और मैक्समूलर की योजना के परिणामस्वरूप इस देश में संस्कृत के विद्वान् खोजने पर भी नहीं मिल पाते। यहाँ के लोगों की दृष्टि में आज पाश्चात्य लोग ही संस्कृत के प्रामाणिक भाष्यकार बन बैठे हैं। ऋषि दयानन्द ने आर्य समाज को वेदाध्ययन की जो दृष्टि दी थी, उसने उस वेदाध्ययन और संस्कृत के पठन-पाठन को स्वयं से दूर कर लिया और टाई लगाकर अंग्रेजी बोलने को ही जीवन का परम लक्ष्य बना लिया तो आज उसके पास क्या सामर्थ्य है कि वह वेद और संस्कृत के विषय में अपना कोई पक्ष रख सके?

वर्तमान घटनाक्रम में २ मार्च के वाशिंगटन पोस्ट में समाचार प्रकाशित हुआ- **हारवर्ड विश्वविद्यालय की प्राचीन संस्कृत साहित्य के अंग्रेजी अनुवाद की कार्य योजना पर दक्षिण पन्थी हिन्दुओं का आक्रोश।** इस समाचार में घटना और उसकी प्रतिक्रिया की चर्चा की गई है। इस समाचार को समझने के लिए हमें इसकी पृष्ठभूमि में जाना होगा। सन् १८३२ में लैफ्टिनेंट कर्नल जोसेफ बोडेन ने ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में संस्कृत की चेयर स्थापित की थी, जिसमें मैक्समूलर को संस्कृत ग्रन्थों- विशेषत: वेदों के अनुवाद का काम सौंपा गया था। उनका उद्देश्य मात्र वैदिक साहित्य एवं संस्कृति को नष्ट-भ्रष्ट करना था। विशेष रूप से हिन्दुओं की आस्था को समाप्त करने के लिये वेदों के गलत व्याख्यान करना था। इसी तरह अब सन् २०१० में इन्फोसिस के संस्थापक नारायण मूर्ति ने ५.२ मिलयन डॉलर से 'मूर्ति क्लासिकल लाईब्रेरी ऑफ इण्डिया' नाम से एक निधि स्थापित की है, जिसके माध्यम से प्राचीन संस्कृत ग्रन्थों का प्रामाणिक रूप से अंग्रेजी अनुवाद कराके यह प्रकाशित किया जायेगा। इस क्रम में अबतक ग्रन्थमाला के नौ भाग प्रकाशित किये जा चुके हैं तथा चार भाग प्रकाशन के लिये तैयार हैं। इस कार्य में अनेक विदेशी विद्वान् लगे हुए हैं। इस कार्य में लगे हुए विद्वानों के मुखिया हैं कोलम्बिया विश्वविद्यालय के प्राच्य विद्या विद्वान् शेल्डन पोलक। पोलक को इस कार्य का निर्देशन करने में किसी को क्या आपत्ति हो सकती है- इसको बात को जानने के लिये पोलक के विचार, कार्य शैली और उनके सम्बन्धों की पहचान करनी होगी। पोलक के चरित्र को समझने के जिन घटनाओं में उसकी भागीदारी है, उनको देखने से पोलक का चरित्र स्पष्ट हो जाता है। २००५ में फ्लोरिडा में अमेरिकन होटल के मालिकों द्वारा ने तत्कालीन गुजरात के मुख्यमन्त्री नरेन्द्र मोदी को बुलाये जाने पर उस निमन्त्रण को रद्द कराने वाले लोगों में श्रीमान् पोलक ही आगे थे। २००५ में ही केलिफोर्निया विश्वविद्यालय में होने वाले कार्यक्रम का विरोध करते हुए कहा गया था- हमें यह जानकर बहुत दु:ख है कि २२ मार्च को सम्पन्न हो रहे भारतीय विद्याओं के अध्ययन हेतु यदुनन्दन अध्ययन केन्द्र के उद्घाटन हेतु नरेन्द्र मोदी, गुजरात के मुख्यमन्त्री को आमन्त्रित किया गया है। हमारी दृढ़तापूर्वक प्रार्थना है कि इस आमन्त्रण को वापस ले लिया जाये। इस माँग को करने वालों में भी पोलक का नाम प्रमुख है। फिर २००९ में मेक आर्थर फाउण्डेशन द्वारा बुलाये जाने पर कहा गया- एशियाई प्रमुख व्यक्तित्व के रूप में इस अवसर पर गुजरात के मुख्यमन्त्री नरेन्द्र मोदी को सम्मानित करना उचित एवं पात्र व्यक्तियों को अपमानित करने जैसा होगा। इस प्रार्थना के करने वालों में पोलक अग्रणी थे। २०१५ में जब मोदी प्रधानमन्त्री बन गये तो एक पत्र भारत सरकार को लिखा गया- हम विद्वान् शोधकर्त्ता और शोध छात्रों का भारत सरकार से आग्रह है कि १,५०,००० (एक लाख पचास हजार) पृष्ठ की गाँधी हत्याकाण्ड से जुड़ी सामग्री की सुरक्षा के विषय में भारत सरकार अपना पक्ष तत्काल

स्पष्ट करे। इसमें भी हस्ताक्षरकर्त्तों में पोलक को चिन्ता करते हुए देखा जा सकता है।

वाशिंगटन पोस्ट के २ मार्च के समाचार पत्र में लिखा गया है कि- पोलक का साम्यवादियों से सम्बन्ध है। वामपन्थी लेखकों के साथ पोलक के विचार भारतीय सभ्यता और संस्कृति के सम्बन्ध में सम्मानजनक नहीं है। समाचार पत्र लिखता है- पोलक उन लोगों में सम्मिलित है जो लोग जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय के राष्ट्रद्रोही गतिविधियों का अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता के नाम पर समर्थन करते हैं। इस प्रकार पोलक देश की एकता, अखण्डता का सम्मान नहीं करता है।

इस बात से समझा जा सकता है कि शेल्डन पोलक की विचारधारा क्या है और उसके द्वारा किये जाने वाले कार्य का उद्देश्य क्या है तथा उसका दूरगामी प्रभाव क्या होगा? इस कार्य का पहला उद्देश्य वही है, जिसको मैकाले की प्रेरणा से मैक्समूलर ने पूरा किया था। इस कार्य से दो परिणाम निकले- शिक्षा के माध्यम और शिक्षा पद्धति के परिवर्तित होने से इस देश के लोग संस्कृत के पठन-पाठन से विमुख हो गये और अंग्रेजी अनुवाद को पढ़कर संस्कृत विद्वान् बन गये तथा उसे ही ठीक मानने लगे जो अंग्रेजी में लिखा गया है। मूल ग्रन्थ की भाषा के अभाव में ग्रन्थ को पढ़ना ही नहीं आता था तो उसे समझने का प्रश्न ही कहाँ उठता है? मैक्समूलर के इसी साहित्य से इस देश के विद्वानों ने जाना कि वेद गड़रियों के गीत हैं। अंग्रेजों ने भारत के विषय में जितना अध्ययन किया, उसमें परिश्रम बहुत है, ईमानदारी बिल्कुल नहीं है। उनसे इसकी आशा करना हमारी मूर्खता होगी। इस देश पर अंग्रेजों का शासन था, हम उनके दास थे, यह कैसे सम्भव है कि कोई स्वामी अपने दास को अपने से श्रेष्ठ माने? उसे तो यहाँ की जनता पर शासन करना है तो वह आपके अच्छे को भी बुरा कहने का अधिकार रखता है। हमने स्वयं भूल की है कि अंग्रेज को अपना आदर्श बनाया और जैसा वह चाहता था, स्वतन्त्रता के बाद भी वही किया, जो अंग्रेजों के समय इस देश में हो रहा था। उसमें गति और विस्तार तो आया, परन्तु परिवर्तन किञ्चित् मात्र भी नहीं आया। आज परिणाम हमारे सामने है।

अंग्रेजों ने हमारे इतिहास, साहित्य और संस्कृति से बलात्कार किया है, सामान्य व्यक्ति उसकी कल्पना भी नहीं कर सकता। शोध के नाम पर उसने इतिहास संस्कृति के लिये, जो अध्ययन का प्रकार अपनाया और यहाँ की प्रचलित परम्परा को रद्दी की टोकरी में डाल दिया। मैक्समूलर के शोध ने इस देश के निवासियों को यहाँ का मानने से ही इन्कार कर दिया। उसने आर्य द्रविड़ के काल्पनिक सिद्धान्त को हमारे ऊपर थोपा और अपनी सत्ता व पैसे के बल पर हमें ही इस देश में विदेशी और पराया घोषित कर दिया। आजतक भी इस सिद्धान्त को प्रमाणित नहीं किया जा सका, परन्तु किसी को कहने से कौन रोक सकता है? पैसा साधन मिल जाये तो प्रचार करने में क्या बाधा है। उससे भी बड़ी बात सत्ता में बैठे लोगों को ही इस विचार के लिये सहमत कर लिया जाये तो यह विचार शासन का विचार बन जाता है, जिसका परिणाम आज हमारे सामने है। आज जब सारे संसार में विभिन्न भाषाओं की पुस्तकों का प्रकाशन हो रहा है, ऐसी परिस्थिति में विश्व पुस्तक मेले में एक भी संस्कृत साहित्य के पुस्तक विक्रेता का नहीं आना, संस्कृत पाठक के अभाव को दर्शाता है।

अंग्रेजों का अन्य षड्यन्त्र है- संस्कृत भाषा को मृत भाषा घोषित करना। यह कार्य बहुत सरलता से हो गया, जब सरकार ने संस्कृत को पाठ्यक्रम से बाहर कर दिया। इस देश में शासन की भाषा, संसद की भाषा, न्यायालय की भाषा, शिक्षा की भाषा, प्रशासन और व्यवहार की भाषा जब अंग्रेजी बना दी गई तो संस्कृत-हिन्दी किस खेत की मूली हैं? थोड़े से पुराने लोग जो अंग्रेजी नहीं जानते, जब तक वे जीवित हैं, हिन्दी बोलते देखे जा सकते हैं। जैसे ही अगले दस-पन्द्रह वर्ष में ये लोग मर जायेंगे, अगली आने वाली पीढ़ी गर्व से कहेगी, हमें हिन्दी नहीं आती।

अंग्रेजों ने संस्कृत को पढ़ने और उसकी व्याख्या करने के लिये अपने ही आधार बनाये हैं। संस्कृत में जो ग्रन्थ लिखा गया है, लेखक को उसके लिखने का क्या प्रयोजन है, इसका निर्णय भी अंग्रेज ने अपने हाथ में रखा है। पुस्तक में विचारों के श्रेष्ठता निम्नता का निर्णय भी अंग्रेज उस पुस्तक को पढ़कर बतायेगा। विड़म्बना यह है कि इस पुस्तक का लेखक इस देश है, भाषा इस देश की है, परम्परा इस देश की है, परन्तु इस सब को तिरस्कृत करके निर्णय का आधार स्वयं अंग्रेज का अपना बनाया हुआ है वह परम्परा से प्रचलित आधार को वह स्वीकार नहीं करता। इस प्रकार कालक्रम के निर्णय में कौन-सा ग्रन्थ कब लिखा गया, यह भी वह जो कहेगा, वही माना जायेगा। कितना अच्छा न्याय है! अंग्रेज हमें बता रहा कि ऋग्वेद पहले बना या अथर्ववेद? इसका आधार क्या है, इसका निर्णय भी वही करेगा। क्या यह बन्दर बिल्ली का न्याय नहीं है! बिल्लियों के झगड़े में न्याय तो बन्दर का ही माना जायेगा। इस पद्धति से अंग्रेज ने अपना प्रयोजन पूर्ण सिद्ध किया है।

शेल्डन पोलक की मान्यता है संस्कृत एक मृत भाषा

है और संस्कृति तो इस देश में कोई थी ही नहीं, जब भाषा नहीं तो विचार कहाँ से आयेंगे? अंग्रेज की संस्कृत सेवा का प्रयोजन पहले भी वही था जिसे मैकाले-मैक्समूलर ने स्थापित किया था। दुर्भाग्य तो यही है कि वही कार्य पहले बोडेन के धन से हुआ था, आज वह वह एक भारतीय नारायण मूर्त्ति के धन से हो रहा है। इस देशवासियों के लिये इससे अधिक गर्व की और क्या बात होगी!

शेल्डन पोलक के इस अनुवाद के पीछे एक ओर षड्यन्त्र है, संस्कृत ग्रन्थों का अंग्रेजी में ऐसा अनुवाद करना, जो उनके विचार से मेल खाता हो। इस अनुवाद के करने से लोगों को संस्कृत पढ़ने की आवश्यकता ही अनुभव न हो, जैसा आज मैक्समूलर का अनुवाद पढ़ कर हम वेद समझते हैं वैसे ही पोलक का वेद-अनुवाद हमारे लिये वेद से अधिक प्रामाणिक प्रतीत होगा। इस कार्य का परिणाम होगा- शोध, अनुसन्धान, संस्कृति एवं इतिहास को जानने की भाषा संस्कृत नहीं रहेगी, उसे वह सम्मान नहीं मिल पायेगा, जो अंग्रेजी को मिल रहा है और अंग्रेजी का ही सम्मान इस देश में बढ़ जायेगा। शेल्डन पोलक की मान्यता है कि संस्कृत में तब तक शोध नहीं हो सकता, जब तक संस्कृत का विद्वान् बढ़िया अंग्रेजी नहीं जानता। जब अंग्रेजी के बिना शोध नहीं हो सकेगा, तो संस्कृत पढ़ने की आवश्यकता ही क्या रहेगी? संस्कृत का प्रामाणिक अनुवाद शेल्डन पोलक आपकी सेवा के लिये ही तो कर रहा है। इस प्रकार संस्कृत भाषा शोध एवं अनुसन्धान की धारा से अपने-आप ही बाहर हो जायेगी।

अंग्रेज लेखक चाहे मैक्समूलर हो या पोलक, सभी संस्कृत पढ़कर यह स्थापित करना चाहते हैं कि संस्कृत तथा कथित कुलीन, दरबारी लोगों की भाषा है। राजे-रजवाड़ों को प्रसन्न करने के लिये संस्कृत में ग्रन्थों की रचना की गई। इसमें महिलाओं और दलितों का अपमान ही किया गया, उनको सम्मान के योग्य भी नहीं माना गया, अधिकार देना तो बहुत दूर की बात है।

शेल्डन पोलक की मान्यता है कि हिन्दू और हिन्दुत्व को इस देश के लोगों में भय उत्पन्न करने के लिये उपयोग में लाया जा रहा है। पोलक का उद्देश्य ईसाई, मुसलमान, दलित को हिन्दुत्व से अलग करके प्रस्तुत करना है। हिन्दुत्व को अल्पसंख्यक और दलितों को दबाने वाला समुदाय बताया जाता है। शेल्डन पोलक के मत में हिन्दुत्व की बात करना संकीर्ण मानसिकता का द्योतक है, वही बात ईसाई, मुसलमान करें तो यह उदारता का परिचायक है। राष्ट्र की एकता देशभक्ति की बात करना संकीर्णता है, देशद्रोह की घोषणा करना, विचारों की अभिव्यक्ति और व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का परिचायक है। हिन्दू और इनकी भाषा का इस देश की अन्य भाषाओं और लोगों से कोई सम्बन्ध नहीं है और हिन्दुत्व की विचारधारा देश की बहुसंख्यक विचारधारा से अलग है, यह भी उसकी मान्यता है।

शेल्डन पोलक के अनुसन्धान से आप गद्‌गद् हो जायेंगे। उसकी स्थापना है कि वेद बुद्ध के बाद की रचना है। मीमांसा जैसे दार्शनिक विचार बुद्ध के बाद ही संस्कृत में लिये गये हैं। रामायण का लेखन भी बुद्ध के बाद हुआ है। रामायण-महाभारत कोई इतिहास नहीं हैं, ये तो मनोरंजन के लिये लिखे गये काल्पनिक काव्य हैं। इनमें दलितों और महिलाओं के उत्पीड़न के अतिरिक्त कोई आदर्श बात नहीं है। पोलक को सबसे पीड़ा देने वाली बात लगती है, संस्कृत साहित्य में आदर्श और अध्यात्म की बात करना। उसके विचार से वेद, वैदिक साहित्य, रामायण, महाभारत और बाद के साहित्य का अध्यात्म से कुछ भी लेना-देना नहीं है। ये सब काल्पनिक बातें हैं। ये ग्रन्थ धर्म निरपेक्षता, व्यक्तिगत विचार स्वातन्त्र्य से कोई सम्बन्ध नहीं रखते हैं।

इन्हीं सब बातों से कुछ भारतीय विद्वानों ने इस संस्था और उसके संचालकों के विरुद्ध वाद दायर किया है, जिसमें शेल्डन पोलक को हटाने और भारत से सम्बद्ध कार्य को भारत से बाहर न किया जाकर, भारत में ही करने की माँग की गई है। इस विषय में विस्तार से जानकारी के लिये राजीव मल्होत्रा की पुस्तक 'द बैटल फॉर संस्कृत' पढ़ें, दिल्ली में सुलभ है।

इस परिस्थिति में भारतीय संस्कृति, साहित्य और इतिहास अंग्रेज तो नष्ट करेगा ही, परम्परावादी भी उसे रुढ़ि और अन्धविश्वास से बाहर नहीं निकलने देंगे। तब कौन वैदिक धर्म और वैदिक संस्कृति को बचाने का बीड़ा उठायेगा? आज फिर यह पंक्ति उत्तर माँग रही है-

किं करोमि क्व गच्छामि, को वेदानुद्धरिष्यति।।

- धर्मवीर

सन्दर्भ-१ ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका एवं सत्यार्थ प्रकाश में मैक्समूलर से सम्बन्धित महर्षि के विचार

भाषार्थ- इससे जो अध्यापक विलसन साहेब और अध्यापक मोक्षमूलर साहेब आदि यूरोपखण्डवासी विद्वानों ने बात कही है कि- वेद मनुष्य के रचे हैं किन्तु श्रुति नहीं है, उनकी यह बात ठीक नहीं है। और दूसरी यह है-कोई कहता है (२४००) चौबीस सौ वर्ष वेदों की उत्पत्ति को हुए, कोई (२९००) उनतीस सौ वर्ष, कोई (३०००) तीन हजार वर्ष और कोई कहता है (३१००) इकतीस सौ वर्ष वेदों को उत्पन्न हुए बीते हैं, उनकी यह भी बात झूठी है।

क्योंकि उन लोगों ने हम आर्य्य लोगों की नित्यप्रति की दिनचर्या का लेख और संकल्प पठनविद्या को भी यथावत् न सुना और न विचारा है, नहीं तो इतने ही विचार से यह भ्रम उनको नहीं होता। इससे यह जानना अवश्य चाहिए कि वेदों की उत्पत्ति परमेश्वर से ही हुई है, और जितने वर्ष अभी ऊपर गिन आये हैं उतने ही वर्ष वेदों और जगत् की उत्पत्ति में भी हो चुके हैं। इससे क्या सिद्ध हुआ कि जिन-जिन ने अपनी-अपनी देश भाषाओं में अन्यथा व्याख्यान वेदों के विषय में किया है, उन-उन का भी व्याख्यान मिथ्या है। क्योंकि जैसा प्रथम लिख आये हैं जब पर्यन्त हजार चतुर्युगी व्यतीत न हो चुकेंगी तक पर्यन्त ईश्वरोक्त वेद का पुस्तक, यह जगत् और हम सब मनुष्य लोग भी ईश्वर के अनुग्रह से सदा वर्त्तमान रहेंगे।

भाषार्थ- इसमें विचारना चाहिये कि वेदों के अर्थ को यथावत् विना विचारे उनके अर्थ में किसी मनुष्य को हठ से साहस करना उचित नहीं, क्योंकि जो वेद सब विद्याओं से युक्त हैं, अर्थात् उनमें जितने मन्त्र और पद हैं, वे सब सम्पूर्ण सत्यविद्याओं के प्रकाश करनेवाले हैं। और ईश्वर ने वेदों का व्याख्यान भी वेदों से कर रखा है, क्योंकि शब्द धात्वर्थ के साथ योग रखते हैं। इसमें निरुक्त का भी प्रमाण है, जैसा कि यास्कमुनि ने कहा - (तत्प्रकृतीत०) इत्यादि। वेदों के व्याख्यान करने के विषय में ऐसा समझना चाहिए कि जब तक सत्य प्रमाण, सुतर्क, वेदों के शब्दों का पूर्वापर प्रकरणों, व्याकरण आदि वेदांगों, शतपथ आदि ब्राह्मणों, पूर्वमीमांसा आदि शास्त्रों और शास्त्रकारों का यथावत् बोध न हो, और परमेश्वर का अनुग्रह, उत्तम विद्वानों की शिक्षा, उनके संग से पक्षपात छोड़ के आत्मा की शुद्धि न हो, तथा महर्षि लोगों के किये व्याख्यानों को न देखें, तब तक वेदों के अर्थ का यथावत् प्रकाश मनुष्य के हृदय में नहीं होता। इसलिये सब आर्य विद्वानों का सिद्धान्त है कि प्रत्यक्षादि प्रमाणों से युक्त जो तर्क है, वही मनुष्यों के लिये ऋषि है।

इससे यह सिद्ध होता है कि जो सायणाचार्य और महीधरादि अल्पबुद्धि लोगों के झूठे व्याख्यानों को देख के आजकल के आर्यावर्त्त और यूरोपदेश के निवासी लोग जो वेदों के ऊपर अपनी-अपनी देश-भाषाओं में व्याख्यान करते हैं, वे ठीक-ठीक नहीं हैं, और उन अनर्थयुक्त व्याख्यानों के मानने से मनुष्यों को अत्यन्त दुःख प्राप्त होता है। इससे बुद्धिमानों को उन व्याख्यानों का प्रमाण करना योग्य नहीं। 'तर्क' का नाम ऋषि होने से सब आर्य लोगों का सिद्धान्त है सब कालों में अग्नि जो परमेश्वर है, वही उपासना करने के योग्य है।

भाषार्थ- जगत् के कारण=प्रकृति में जो प्राण हैं, उनको प्राचीन, और उसके कार्य में जो प्राण हैं, उनको नवीन कहते हैं। इसलिये सब विद्वानों को उन्हीं ऋषियों के साथ योगाभ्यास से अग्नि नामक परमेश्वर की ही स्तुति, प्रार्थना और उपासना करनी योग्य है। इतने से ही समझना चाहिये कि भट्ट मोक्षमूलर साहेब आदि ने इस मन्त्र का अर्थ ठीक-ठीक नहीं जाना है।

भाषार्थ- जैसे 'छन्द' और 'मन्त्र' ये दोनों शब्द एकार्थवाची अर्थात् संहिता भाग के नाम हैं, वैसे ही 'निगम' और 'श्रुति' भी वेदों के नाम हैं। भेद होने का कारण केवल अर्थ ही है। वेदों का नाम 'छन्द' इसलिये रखा है कि वे स्वतन्त्र प्रमाण और सत्यविद्याओं से परिपूर्ण हैं तथा उनका 'मन्त्र' नाम इसलिये है कि उनसे सत्यविद्याओं का ज्ञान होता है और 'श्रुति' इसलिये कहते हैं कि उनके पढ़ने, अभ्यास करने और सुनने से सब पदार्थों का यथार्थ ज्ञान हो उसको 'निगम' कहते हैं। इससे यह चारों शब्द पर्याय अर्थात् एक अर्थ के वाची हैं, ऐसा ही जानना चाहिये।

भाषार्थ- वैसे ही अष्टाध्यायी व्याकरण में भी छन्द, मन्त्र और निगम ये तीनों नाम वेदों के ही हैं। इसलिये जो लोग इनमें भेद मानते हैं उनका वचन प्रमाण करने के योग्य नहीं।

प्रश्न- प्रथम इस देश का नाम क्या था और इसमें कौन बसते थे?

उत्तर- इसके पूर्व इस देश का नाम कोई भी नहीं था और न कोई आर्य्यों के पूर्व इस देश में बसते थे। क्योंकि आर्य्य लोग सृष्टि की आदि में कुछ काल के पश्चात् तिब्बत से सूधे इसी देश में आकर बसे थे।

प्रश्न- कोई कहते हैं कि ये लोग ईरान से आये। इसी से इन लोगों का नाम 'आर्य' हुआ है। इनके पूर्व यहाँ जंगली लोग बसते थे कि जिनको 'असुर' और 'राक्षस' कहते थे। आर्य लोग अपने को देवता बतलाते थे और उनका जब संग्राम हुआ, उसका नाम 'देवासुरसंग्राम' कथाओं में ठहराया।

उत्तर- यह बात सर्वथा झूठ है। क्योंकि- **वि जानीह्यार्यान् ये च दस्यवो बर्हिष्मते रन्धया शासदव्रतान।।** ऋ० म० १। सू०५१। मं०८।।

उत शूद्र उतार्ये।।

-यह भी अथर्ववेद कां० १९। सू०६२। मं०१ का प्रमाण है।। हम लिख चुके हैं कि 'आर्य' नाम धार्मिक, विद्वान्, आप्त पुरुषों का और इनसे विपरीत जनों का नाम 'दस्यु' अर्थात् डाकू, दुष्ट, अधार्मिक और अविद्वान् है। तथा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, द्विजों का नाम 'आर्य' और शूद्र का नाम 'अनार्य्य' अर्थात् 'अनाड़ी' है। जब वेद यह कहता

है तो दूसरे विदेशियों के कपोलकल्पित को बुद्धिमान् लोग कभी नहीं मान सकते। और देवासुर-संग्राम में आर्य्यावर्त्तीय अर्जुन तथा महाराजे दशरथ आदि जो कि हिमालय पहाड़ में आर्य विद्वान् और दस्यु, म्लेच्छ असुरों का जो युद्ध हुआ था, उसमें 'देव' अर्थात् आर्य्यों की रक्षा और असुरों के पराजय करने को सहायक हुए थे। इससे यही सिद्ध होता है कि आर्य्यावर्त्त (के) बाहर चारों ओर जो हिमालय के पूर्व, आग्नेय, दक्षिण, नैर्ऋत, पश्चिम, वायव्य, उत्तर, ईशान देश में मनुष्य रहते हैं उन्हीं का नाम 'असुर' सिद्ध होता है। क्योंकि जब-जब हिमालय-प्रदेशस्थ आर्य्यों पर लड़ने को चढ़ाई करते थे, तब-तब यहाँ के राज महाराजे लोग उन्हीं उत्तर आदि देशों में आर्य्यों के सहायक होते थे। और जो श्रीरामचन्द्रजी से दक्षिण में युद्ध हुआ है, उसका नाम 'देवासुर संग्राम' नहीं है, किन्तु राम-रावण अथवा आर्य्य और राक्षसों का संग्राम कहते हैं। किसी संस्कृत ग्रन्थ वा इतिहास में नहीं लिखा कि आर्य्य लोग ईरान से आये और यहाँ के जङ्गलियों को लड़ कर , जय पाके, निकाल के, इस देश के राजा हुए, पुन: विदेशियों का लेख माननीय कैसे हो सकता है? और

आर्यावाचो म्लेच्छवाच: सर्वे ते दस्यव: स्मृता:।।१।। - मनु० (तु०-१०।४५)।।

म्लेच्छदेशस्त्वत: पर:।।२।। मनु०(२।२३)

जो आर्यावर्त्त देश से भिन्न देश हैं, वे 'दस्युदेश' और 'म्लेच्छदेश' कहाते हैं। इससे भी यह सिद्ध होता है कि आर्य्यावर्त्त से भिन्न पूर्व देश से लेकर ईशान, उत्तर, वायव्य और पश्चिम देशों में रहने वालों का नाम 'दस्यु' और 'म्लेच्छ' तथा 'असुर' है। और नैर्ऋत, दक्षिण तथा आग्नेय दिशाओं में आर्य्यावर्त्त देश से भिन्न रहने वाले मनुष्यों का नाम 'राक्षस' है।

और जितनी विद्या भूगोल में फैली है, वह सब आर्य्यावर्त्त देश से मिश्रवालों, उनसे यूनानी, उनसे रोम और उनसे यूरोप देश में, उनसे अमेरिका आदि देशों में फैली है। अब तक जितना प्रचार संस्कृत विद्या का आर्य्यावर्त्त देश में है उतना किसी अन्य देश में नहीं। जो लोग कहते हैं कि जर्मनदेश में संस्कृत विद्या का बहुत प्रचार है और जितना संस्कृत मोक्षमूलर साहब पढ़े हैं उतना कोई नहीं पढ़ा, यह बात कहने मात्र है। क्योंकि 'यस्मिन्देशे द्रुमो नास्ति तत्रैरण्डोऽपि द्रुमायते' अर्थात् जिस देश में कोई वृक्ष नहीं होता, उस देश में एरण्ड ही को बड़ा वृक्ष मान लेते हैं। वैसे ही यूरोप देश में संस्कृत विद्या का प्रचार न होने से जर्मन लोगों और मोक्षमूलर साहब ने थोड़ा सा पढ़ा, वही उस देश के लिए अधिक है। परन्तु आर्य्यावर्त्त देश की ओर देखें, तो उनकी बहुत न्यून गणना है। क्योंकि मैंने जर्मन देशनिवासी के-एक 'प्रिन्सिपल' के पत्र से जानाकि जर्मन देश में संस्कृत-चिट्ठी का अर्थ करनेवाले भी बहुत कम हैं। और मोक्षमूलर साहेब के संस्कृत-साहित्य और थोड़ी-सी वेद की व्याख्या देखकर मुझको विदित होता है कि मोक्षमूलर साहब ने इधर-उधर आर्य्यावर्त्तीय लोगों की की हुई टीका देखकर कुछ-कुछ यथा-तथा लिखा है। जैसा कि-

'युञ्जन्ति ब्रध्नमरुषं चरन्तं परि तस्थुष:।
रोचन्ते रोचना दिवि।।'

इस मन्त्र का अर्थ 'घोड़ा' किया है। इससे तो जो सायणाचार्य ने 'सूर्य्य' अर्थ किया है सो अच्छा है। परन्तु इसका ठीक अर्थ 'परमात्मा' है, सो मेरी बनाई 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' में देख लीजिये। उसमें इस मन्त्र का अर्थ यथार्थ किया है। इतने से जान लीजिये कि जर्मन देश और मोक्षमूलर साहब में संस्कृत-विद्या का कितना पाण्डित्य है।

यह निश्चय है कि जितनी विद्या और मत भूगोल में फैले हैं, वे सब आर्य्यावर्त्त देश ही से प्रचरित हुए हैं। देखो! एक जैकालियट साहब पैरस अर्थात् फ्रांस देश निवासी अपनी 'बायबिल इन इण्डिया' में लिखते हैं कि-''सब विद्या और भलाइयों का भण्डार आर्य्यावर्त्त देश है सब विद्या और मत इसी देश से फैले हैं'' और परमात्मा की प्रार्थना करते हैं कि ''हे परमेश्वर! जैसी उन्नति आर्य्यावर्त्त देश की पूर्व काल में थी, वैसी ही हमारे देश की कीजिये'', सो उस ग्रन्थ में देख लो। तथा 'दाराशिकोह' बादशाह ने भी यही निश्चय किया था कि जैसी पूरी विद्या संस्कृत में है, वैसी किसी भाषा में नहीं। वे ऐसा उपनिषदों के भाषान्तर में लिखते हैं कि -''मैंने अरबी आदि बहुत सी भाषा पढ़ीं, परन्तु मेरे मन का सन्देह छूट कर आनन्द न हुआ। जब संस्कृत देखा और सुना तब नि:सन्देह होकर मुझको बड़ा आनन्द हुआ है'' देखो, काशी के 'मानमन्दिर' में शशिमालचक्र को कि जिसकी पूरी रक्षा भी नहीं रही है, तो भी कितना उत्तम है कि जिसमें अब तक भी खगोल का बहुत सा वृत्तान्त विदित होता है। जो 'सवाई जयपुराधीश' उसकी सम्भाल और फूटे-टूटे को बनवाया करेंगे तो बहुत अच्छा होगा। परन्तु ऐसे शिरोमणि देश को महाभारत युद्ध ने ऐसा धक्का दिया कि अब तक भी यह अपनी पूर्व दशा में नहीं आया। क्योंकि जब भाई को भाई मारने लगे तो नाश होने में क्या सन्देह?

विनाशकाले विपरीतबुद्धि:।। चाणक्यनीतिदर्पण अ० १६। श्लो० ५ ।।

सन्दर्भ २ :- २ मार्च २०१६ के वाशिंगटन पोस्ट में प्रकाशित हारवर्ड प्रोजेक्स से सम्बन्धित समाचार की छायाप्रति।

WorldViews

Harvard project aimed at translating ancient text sparks outrage among Hindu right

By Annie Gowen March 2

Harvard Yard, old heart of Harvard University campus, in Cambridge, Mass., on Nov. 2, 2013. (Jannis Werner/iStock)

A group of Sanskrit scholars in India are calling for an American professor working on a groundbreaking project on Indian classics at Harvard University to be removed because of his "deep antipathy" to Indian ideals and culture, according to a Change.org petition filed Saturday.

Columbia University Professor Sheldon Pollock, a respected Sanskrit scholar and the author of "The Language of Gods in the World of Men: Sanskrit, Culture, and Power in Premodern India," is the editor of a $5 million project by Harvard University Press to publish dozens of Indian classical texts with English translations.

More than 132 professors from some of India's most prominent universities -- some of them from the Hindu right -- have signed the petition, which calls for Pollock's removal as editor and "mentor" of the Murty Classical Library of India series; the project is funded by a Harvard graduate Rohan Murty, the son of Infosys co-founder Narayana Murty.

[Indian students called it free speech. The government called it sedition.]

The petitioners argued that the work of translating the ancient texts should be done in India and "not outsourced wholesale to American Ivy Leagues."

Ramesh C. Bhardwaj, professor and head of the Department of Sanskrit at Delhi University, said that the issue was an academic one, rather than personal.

Pollock had associated himself with "Marxist" scholars in India, he said, and his work does not "provide the true picture of Indian heritage." Neither